© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 03 , Issue : 06 | July - September 2017

प्राचीन भारत में गणित का विकास (1500 ई॰ पू॰ से 600 ई॰ पू॰)

बजरंग लाल, प्रवक्ता, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय
टिटौली, रोहतक

शोध – आलेख सार :–

इस आलेख के माध्यम से शोधार्थी द्वारा गणित के महत्व पर प्रकाश डाला गया है। लेखक ने 1500 ई.पू. से 600 ई. पू. तक के साहित्यिक प्रमाणों का अध्ययन करके गणित के क्रमिक विकास को आलेख के माध्यम से सटीक ढंग से समझाने का प्रयास किया है जिसमें वह पूर्णतया सफल रहे हैं। गणित के बारे में संक्षेप में लिखकर ज्यादा समझाना शोधार्थी के गहन अध्ययन का नतीजा है। उनका यह छोटा सा आलेख गागर में सागर के समान है।

मूल शब्द : अंगुल, पुरुष व्याम, परमाणु, उर्दर व स्थिवि, एक, दश, षट्, सहस्त्र, अयुत, नियुत, प्रयुत, अर्बुद, न्यर्बुद, समृद्ध, मध्य, अंत एवं परार्ध

भूमिका :

प्राचीन भारतीय तकनीकी शिक्षा में योग, आयुर्वेद, धातु रसायन, गणित, खगोलविद्या, ज्यामिति तथा ज्योतिष विज्ञान जैसे अनेक विषयों का अध्ययन किया जाता था। इनमें गणित शिक्षा को अत्यन्त प्राचीन माना जाता है। हडप्पन संस्कृति के उत्खननों से हमें यह जानकारी प्राप्त होती है कि उस काल में भी गणित की जानकारी थी। परवर्ती ग्रन्थों, वेदों, संहिताओ, ब्राह्मणों शुल्ब ग्रथों और वेदांग आदि में भी गणित को सर्वश्रेष्ठ विज्ञान बताया गया है।

यदा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथां।
तद्वि वेदांग शास्त्राणां गणितं मूर्ध्नि वर्तते।।[1]

जैन तथा बौध ग्रंथों जैसे चन्द्र प्रज्ञप्ति, सूर्य प्रज्ञप्ति, भगवती सूत्र, विनयपिटक आदि से भी प्राचीन भारतीय गणित की जानकारी प्राप्त होती है। ब्रह्मगुप्त, आर्यभट्ट प्रथम, आर्यभट्ट द्वितीय, भास्कर प्रथम भाष्कराचार्य एंव महावीर आदि ने अनेक महत्वपूर्ण, ग्रन्थों की रचना की तथा पूर्व काल में की गई खोजों के आधार पर विश्व भर के लिए एक नया उदाहरण प्रस्तुत किया। आवश्यकता आविष्कार की जननी होती है अतः सबसे पहले हमें गणित की क्या आवश्यकता हुई इसका पता लगाना चाहिए। ग्रंथों के अध्यन से हमें यह जानकारी प्राप्त हुई कि व्यापारिक गतिविधियों जैसे माप–तौल के लिए या काल गणना के लिये गणित के सूत्रों का अविष्कार किया गया। वैदिक काल में शरीर के विभिन्न अंगों को मापने के लिए सबसे छोटा मात्रक अंगुल 0.6–1 तथा सबसे बड़ा मात्रक पुरूष व्याम 120 अंगुल प्रयोग किया जाता था।[2] विभिन्न प्राचीन ग्रंथो में हमें इनका मान भिन्न–भिन्न प्राप्त होता है। इन मात्रको के अतिरिक्त लम्बाई के मापन के लिये सूक्ष्मतम मात्रक ($\pi \times 3x5^{-1}x2^{-62}$ से भी कम) परमाणु का प्रयोग किया जाता था। क्षेत्रफल मापन के लिये भी ऋग्वेद में अनेक मात्रकों का वर्णन मिलता है।[3] आर्यो के आगमन से पूर्व की सभ्यताओं को धारिता मापने की विशिष्ट ईकाई का ज्ञान नहीं था परन्तु वैदिक कालीन लोग उर्दर व स्थिवि मात्रकों का प्रयोग करते थे।[4] उर्दर अनाज मापने के लिए निश्चित आयतन वाला बर्तन होता था। उसके अतिरिक्त भार, गोनि, खारी, प्रस्थ आदि मात्रक भी प्रयोग किये जाते थे। इसी प्रकार खेत आदि को मापने के लिए दण्ड आदि विधियों के प्रचलन की जानकारी अथर्ववेद आदि से प्राप्त होती है।[5]

मापने के साथ–साथ तौलने के लिये भी अनेक इकाईयों का प्रयोग किया जाता था। भारतीय मापन प्रणाली पूर्णतया सटीक तथा प्रमाणित पद्धति थी जिसकी तत्कालीन अन्य संस्कृतियों से तुलना करने पर इसकी पुष्टि हो जाती है। इसके लिए तराजू का प्रयोग सर्वप्रथम भारत वर्ष में किया गया। अन्य संस्कृतियों से तुलना करने पर भारतीय तौल प्रणाली अधिक वैज्ञानिक प्रतीत होती है तथा बटखरों की निर्माण पद्धति में एकरूपता भी भारतीय संस्कृति को अन्य सस्कृतियों से अलग करती है।

अंकगणित का विकास :–

अंकगणित के विकास के लिए अंक संकेतों का ज्ञान होना अति आवश्यक है। वर्तमान खोजों ने यह सिद्ध कर दिया यह है कि अकों के आधुनिक स्वरूप का ज्ञान भारतीय विद्वानों को बहुत पहले हो चुका था। यद्यपि इसके विकास मे विश्व की अन्य संस्कृतियों ने भी समय–समय पर आवश्यक योगदान दिया। हड़प्पन सभ्यता से मिली एक मोहर पर अंकित 1 से 13 तक के अंक इसका एक अच्छा उदाहरण है। वैदिक ग्रथों में अनेक मंत्रों में अंको के प्रयोग का वर्णन मिलता है जैसे कि ऋग्वेद के एक मंत्र में 8 अंक का प्रयोग मिलता है।

इंद्रेण युजा निःसृजंत बाधतो व्रजं गोमंत मस्विनम्।

सरस्त्र मे ददतो अष्ठ कर्त्यः श्रवो देवेष्व कत।।[6]

यद्यपि वैदिक अंक संकेतों की संपूर्ण जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी है तथापि अनेक उदाहणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि वैदिक काल में अंक सकेतों तथा अंक पद्धति का विकास हो चुका था। ऋग्वेद में मेधातिथि का उल्लेख प्राप्त होता है जिन्होने दशमलव प्रणाली के आधार पर सँख्याओं को व्यक्त करने की परिकल्पना प्रस्तुत की थी।[7] 1 से लेकर 10 तक की संख्याओं को अंक पद्धति का आधार मानकर दशगुणोत्तर, शत्तोतर एंव कोटि गुणोत्तर संख्याओं का विकास किया गया। संहिता ग्रंथो मे 1 से $(10^{12})^4$ परार्ध तक की सख्याओं का वर्णन मिलता है जैसे एक 1 दश 10 षट् 100 सहस्त्र 1000, अयुत 10000, नियुत 100000, प्रयुत 1000000, अर्बुद 10000000, न्यर्बुद 100000000 समृद्र 1000000000, मध्य 10000000000, अंत 100000000000 एंव परार्ध 1000000000000। अथर्ववेद में संख्याओं और उसकी दहाइयों के आपसी संबंधों का उल्लेख मिलता है।[8] यजुर्वेद में 1,3,5,7,9,11,13,15.....39, 2,4,8,12,16,20.....48 एकादश 10+1, सप्त विंशति 20+7 आदि सख्याओं का वर्णन मिलता है। वैदिक काल में खोजे गये इन अंकों का प्रयोग भारतवर्ष में ही नही अपितु विदेशों में भी होने के प्रमाण मिलते हैं। हिटाइट संस्कृति मे कप्पाडोइया से प्राप्त बोगास–कुई अभिलेख जो कि 1400 ई पू का है उस पर भारत तक अंकों 1,3,5,7,9, अकों का उत्कीर्णन मिलता हैं।[9] वैदिक काल के बाद जैन तथा बौद्ध काल में गणित की बड़ी–बड़ी संख्याओं का विकास किया गया। जैन ग्रंथों में 10^{27} तथा बौद्ध ग्रथों में तल्लक्षण 10^{53} तक की संख्याओं का वर्णन मिलता है जबकि उस समय तक यूनानी मिरअद 10^4 तथा रोमन मिल्ले 10^3 तक की सख्याओं का ही ज्ञान प्राप्त क सके थे।[10] इन सब तथ्यों से स्पष्ट है कि दुनिया भर को अंकों का ज्ञान भारत ने कराया था।

शून्य की परिकल्पना :–

शून्य की खोज गणित के विकास के लिए अति आवश्यक थी। इसके बिना दशमलव स्थान मान पद्धति के अन्तर्गत बड़ी–बड़ी संख्याओं को व्यक्त करना असंभव था। गणित के क्षेत्र में शून्य की खोज ने एक क्रान्ति ला दी। शून्य की उत्पत्ति के बारे में विद्वान एकमत नहीं है। अनेक विद्वान जैसे नीधम तथा कोलिन ने इसका श्रेय चीन को दिया है जबकि न्यूगेबर, शून्य का अविष्कार बेबिलोन को मानता है उसी के अनुरूप भारतीय विद्वान बाग, सेन, दत्ता और सिंह, ब्रजमोहन आदि शून्य का अविष्कार भारत में हुआ मानते हैं। क्योंकि मिश्र की अंक प्रणाली में शून्य प्रयोग के उदाहरण नहीं मिलते वे लोग शून्य के स्थान पर विशेष प्रतीको या योग पद्धति का प्रयोग करते थे। इसी प्रकार बेबीलोन के लोग 200 ई. पू. तक शून्य के स्थान पर $\sum$ का प्रयोग करते थे या रिक्त स्थान छोड देते थे। जबकि भारत मे वैदिक काल से ही शून्य की परिकल्पना का विकास हो चुका था। वैदिक साहित्य मे 'ख', 'आकाश', 'अंबर', 'शून्य', 'क्षिति', 'ओम', 'धरा', 'मंहत', 'वशी', 'तुच्छय' आदि शब्दों का प्रयोग मिलता है। पिंगल छांदव सूत्र 200 ई. पू. मे इसका साहित्यिक उल्लेख मिलता है इसे इस समय बिन्दु के रूप में व्यक्त किया जाता था।[11] अंक गणित के क्षेत्र में गणना करने के लिए संकलन, व्यूतकलन, गुणन, भागहर, वर्ग, वर्गमूल, घन, तथा घनमूल आदि का प्रयोग किया जाता है। विभिन्न संस्कृतियों के गणितीय ज्ञान का अध्ययन करने पर यह पता चलता है कि जोड़ने तथा घटाने का ज्ञान तो सभी संस्कृतियों को प्रागैतिहासिक काल में ही हो गया था परन्तु आधुनिक प्रचलित विधियों के ज्ञान का श्रेय भारतीयों को ही जाता है। 1500 ई पू. के आसपास तुलनात्मक अध्ययन करने पर यह जानकारी मिलती है कि भारत में मिश्र तथा बेबीलोन की भांति गुणन का कार्य सम्पादित होने लगा था। वैदिक साहित्य में इसके लिए व्यय, क्षय, हनन आदि शब्दों का प्रयोग होता था।[12]

भाग के क्षेत्र में भी भारतीय विद्वान यूरोप आदि महाद्वीप के लोगों से आगे थे। ऋग्वेद सहिता तथा ब्राह्मण ग्रंथों से इसकी पुष्टि होती है।[13]

वर्गमूल तथा घनमूल के क्षेत्र मे सर्वप्रथम बेबीलोन मे 1600 ई पू $\sqrt{2}$ का मान पट्टिका न. 6484 पर प्राप्त होता है। परन्तु इसकी सम्पादन विधि का ज्ञान नहीं दिया गया है जबकि भारत में शुल्ब सूत्रों से इसकी स्पष्ट जानकारी प्राप्त होती है।[14]

भारत में भिन्न की जानकारी का उल्लेख ऋग्वेद से प्राप्त होता है। इसमें अर्द्व 1/2, त्रिपाद 3/4, आदि भिन्नों का उल्लेख मिलता है। मैत्रायणी संहिता मे पाद 1/4 शफ 1/8, कुष्ठा 1/12, कला 1/14, आदि भिन्नों का वर्णन मिलता हैं। शुल्ब सूत्रों मे अशं और भाग के साथ–साथ प्रश्नों के न्याय तथा करण में भिन्न के प्रयोग का उल्लेख भी मिलता है। जैसे त्रिभाग या श्रियशं 1/3, पन्चम भाग 1/5, द्वादश भाग 1/12, पंचदश भाग 1/15, त्रयष्टमं 3/8, द्विसप्तम 2/7, त्रयस्त्रयस्त 27/8 आदि। भारतीयों को भिन्न को घटाना, जोड़ना, गुणा करना या भाग देना भी आता था। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भिन्नीय गणना के द्वारा ही त्रैराशिक नियम का निर्माण किया गया जो कि भारतीय तकनीकी शिक्षा की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

इस नियम के तहत फल राशि को इच्छा राशि से गुणा करके प्राप्त गुणनफल को प्रमाणराशि से भाग दिया जाता था और प्राप्त राशि को इच्छा फल कहा जाता था। प्राचीन भारतीय साहित्य से ब्याज, प्रतिशत, भाण्ड, प्रतिभाण्ड, अर्थात विनियम प्रणाली का भी उल्लेख प्राप्त होता है।

1550 ई0 पू0 के आस–पास मिश्र के राइंड पैपिरस पर संमानान्तर तथा गुणोत्तर श्रेंणियों के प्रमाण मिलते हैं। भारत मे भी इस समय इस पर क्षेत्र में विशेष रूचि दिखाई देती है। तैतीरीय सहिता में निम्न श्रेणियों का उल्लेख मिलता है।

1,3,5,.....19,29...99

2,4,6,.....20

4,8,12.....

10,20,30.....

वजसनेयी सहिता में भी युगम तथा अयुगम श्रेणियों के उदाहरण वर्णित हैं जैसे

4,8,12,16,.....48

1,3,5,7,.....31

सारांश :–

प्राचीन भारतीय साहित्य के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय विद्वानों को क्रमचय तथा संचय का ज्ञान भी ईसा की शताब्दी के बहुत पहले हो चुका था। जैन धर्म के ग्रथों में इसको विकल्प और भंग नाम दिया गया है। भगवती सूत्रों मे भी इसका उल्लेख मिलता है।[15]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भले ही हडप्पा लिपि के पढे न जा सकने के कारण गणित ज्ञान विश्व पटल पर न रखा जा सका हो फिर भी वैदिक कालीन साहित्य से अकंगणितीय ज्ञान की मौलिकता की पूरी जानकारी प्राप्त होती है। इसके विकास का श्रेय भारतीय विद्वानों को मिलना चाहिए। वैदिक ग्रथों में एकोनविंशति (20–1), एकान्नशत (100–1), आदि संख्याओं से घटाने की जानकारी मिलती है। मनुष्य ने हाथ और पैर की दस अगुलियों का प्रयोग सर्वप्रथम गणना के लिए किया जो आगे चलकर दशमलव प्रणाली का आधार बना। हडप्पा सभ्यता में मिलने वाले बाट–बट्टे दशमलव पद्धति के आधार पर बनाये गये थे। वेद कालीन वेदियों को भी गणित के अनुसार भिन्न पद्धति का प्रयोग करके बनाया जाता था। इस प्रकार हम कह सकते है कि भारतीय तकनीकी शिक्षा के अन्तर्गत गणित के क्षेत्र में अनेक नये–नये सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये जो वर्तमान शिक्षण पद्धति में भी प्रयोग किये जाते हैं।

सन्दर्भ सूची

1. शर्मा विजय लक्ष्मी, अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में प्राचीन भारतीय विज्ञान, पृ0 53
2- Thomas, F.R.S.E, Ancient Indian weights, prithvi prakashan varansi 1970 page no 13
3. ऋ वे0 1/110/5, 1/100/18, 10/33/6,
4. वही0 2/14/11, 10/68/3
5. अ. वे. 1/2/4, 20/136/3
6. ऋ. वे. 10/62/7
7. ऋ. वे. 10/22/16–28
8. यजु. स. 17/2, तैत. स.:– 4/4/2/4, पंच ब्रा. : 17/14/1/2
9- Jairzbhoy, R. A., foreign influence in ancient India, Bombay, 1963 page no 13
10. शर्मा विजय लक्ष्मी, उपरोक्त पृ064
11 Datta, V. B & Singh, A.N, hindu Ganitu Shastra ka itihas transtated by K. S. shukla 1974 page no 113
12. पि. छ. सू. : 8/31 तक
13. डा. शर्मा विजय शर्मा लक्ष्मी, उपरोक्त पू. 71
14. ऋ. वे. 10/90/4
15. भगवती सूत्र 3/4